पश्चिम भारतीय कला शैली की ताड़पत्रीय ग्रन्थ चित्र परम्परा

निकिता जैन
शोधार्थिनी

शोधपत्र का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है:

निकिता जैन,
''*पश्चिम भारतीय कला शैली की ताड़पत्रीय ग्रन्थ चित्र परम्परा*'',
Artistic Narration 2017, Vol. VIII, No.1, pp. 70- 74
http://anubooks.com/?page_id=2325

सारांश

कला मानव जीवन का अभिन्न अंग है। मानव जीवन की ही भाँति कला अविरल अपने विकास के पथ पर चलती रही है। प्रागैतिहासिक कला के रूप में कला का प्रारम्भिक चरण प्राप्त होता है, जो शैल चित्रों के रूप में विभिन्न स्थानों पर पायी गयी है। निरन्तर विकासशील रही भारतीय कला ने अजन्ता में अपना स्वर्णयुग देखा तत्पश्चात् बाघ, बादामी, एलोरा आदि गुफा चित्रों के बाद भारतीय कला में पतन के लक्षण दिखायी देने लगे। 8वीं–9वीं शती में भारत पर बढ़ते विदेशी आक्रमणकारियों के हमले ने भारतीय कला को बहुत क्षति पहुंचायी। उन्होंने भारतीय कला मन्दिरों, मन्दिरों, गुफाओं आदि को नष्ट करना प्रारम्भ कर दिया। इसी कारण इस समय राजाओं ने व कलाकारों ने भारतीय कला के अस्तित्व को बचाने के लिए व भावी पीढ़ी के लिए धर्म सम्बन्धी ज्ञान के संग्रहण के लिए ग्रन्थों व कला को लघु चित्रों के रूप में बनाना प्रारम्भ कर दिया, जिन्हें सुरक्षा की दृष्टि से एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाना संभव हो।

प्रस्तावना

लघु चित्रण परम्परा का प्रारम्भ पाल चित्र शैली से माना गया, जो पाल राजाओं के अधीन 9वीं – 10वीं शती में बंगाल, बिहार, नेपाल आदि क्षेत्र में पनपी। इस शैली में बौध धर्म संबंधी चित्रों को बनाया गया। 10–11वीं शताब्दी में लघु चित्रण परम्परा की नवीन शैली पश्चिमी भारतीय कला शैली प्रारम्भ हुई। जो भारतीय कला में आगे आने वाली सभी चित्र शैलियों की पथ प्रदर्शक शैली सिद्ध हुई। इस शैली के प्रारम्भिक सभी ग्रन्थ चित्र जैन धर्म से सम्बन्धित होने के कारण इस शैली को पहले जैन शैली नाम दिया गया, परन्तु उसके बाद सन् 1995ई0 के लगभग गुजरात के संस्कृत विद्वान स्व0 आचार्य केशवलाल हर्षदराय ध्रुव को कपडे पर लिखित और चित्रित बसन्त विलास नामक एक पट मिला जो सन् 1451 ई0 मे अहमदाबाद में रचा गया। यह पट चित्र जैन धर्म से सम्बन्धित न होने के कारण जैन शैली वाला नाम त्याग दिया गया इस कारण इसे गुजरात शैली नाम दिया गया इस शैली के प्राप्त सभी गन्थ चित्र गुजरात मे चित्रित किए गये थे। परन्तु जब इस प्रकार के चित्र गुजरात के बाहर राजस्थान, मालवा आदि अन्य स्थानो पर बने भी मिले। केवल गुजरात मे ही नही वरन् सम्पूर्ण पश्चिमी भारत से इस शैली के ग्रन्थ चित्र मिलने के कारण इस शैली के लिए आनन्द कुमार स्वामी जी जैसे विद्वानों ने पश्चिम भारतीय कला शैली नाम दिया। परन्तु इस शैली के चित्र पश्चिम भारत के बाहर सम्पूर्ण भारत मे बने। मालवा, अवध, बिहार, उडीसा, बंगाल नेपाल म्यांमार, आसाम आदि में भी इस शैली का अस्तित्व पाया जाने के कारण इस शैली का नामकरण फिर एक बार समस्या बन गया। चूंकि यह समय पतन का युग था तथा इस संमय पतन के लक्षणों के कारण अन्य क्षेत्रों में 'अपभ्रश' शब्द अत्यधिक प्रयोग मे लाया जा रहा था, इसी आधार पर प्रसिद्ध विद्वान राय कृष्ण दास जीने इस शैली को पतन की शैली मानते हुये अपभ्रंश शैली नाम दिया।

पश्चिम भारतीय कला शैली में लिप्यासन के रूप मे अनेक दिखायी देती है (जिन वस्तुओं को ग्रन्थ के लेखन, चित्रण के लिए आधार रूप में उपयोग में लाया गया उन्हें (लिपि +आसन) लिप्यासन कहा गया।) इस सयम ग्रन्थ चित्र प्रमुख तीन आधारों पर मिलें।

1.ताडपत्रीय ग्रन्थ चित्र

2. कागजीय ग्रन्थ चित्र

3. पट चित्र

ताडपत्र प्राचीन समय से ही लेखन के आधार के रूप में प्रयुक्त होते रहे है ताडपत्र पर लिखित प्राचीनतम् मान्य प्रतियाँ पाशुपत मत के आचार्य रामेश्वरध्वज कृत 'कुसुमाजंलि टीका' और प्रबोध सिद्धी है। इनका लिपिकाल ईसा की प्रथम अथवा द्वितीय शताब्दी माना गया है।

ताडपत्र पर बने ग्रन्थ चित्र पाल शैली व पश्चिम भारतीय शैली में ही देखने को मिले। कुछ कलाविदो का मानना है कि पश्चिमी भारतीय कला शैली मे जैनाचार्यो ने बौघ धर्म की प्रारम्भिक सचित्र पाण्डुलिपियों से जैन पाण्डुलिपियों को चित्रित करने की प्रेरणा ली। जिसका कारण पाल शैली की ताडपत्र पर प्राप्त पहली चित्रित पोथी 10 वीं शताब्दी के अन्तिम चरण का होना माना गया, परन्तु इस विषय मे निश्चयपूर्वक कुछ कहा नही जा सकता है।

1100ई0–1400ई0 डॉ0 मोतीचन्द्र के मतानुसार इस चित्रशैली के ताडपत्रीय ग्रन्थ गुजरात मे सोंलकी राजाओ के संरक्षण में 1100ई0 से 1400ई0 के मध्य चित्रित गए। डॉ0 कुमार स्वामी व एन.सी. मेहता ने प्राचीनतम् ताडपत्र पर चित्रित ग्रन्थ सन् 1237 ई0 लगभग के कल्पसूत्र को माना। रायकृष्ण व डॉ0 गोयट्ज ने सि़द्धराज जयसिंह के राज्यकाल में सन् 1100ई0 में चित्रित 'निशीथचूर्णी' ग्रन्थ को ताडपत्रीय ग्रन्थ चित्र की प्रारम्भिक प्रति माना। डॉ0 रामनाथ ने इसी सन्दर्भ मे पाटन के जैन ज्ञान भण्डार में संग्रहित सन् 1062 ई0 की 'भगवती' 'सूत्र' की प्रति जिस पर केवल अंलकरण किया हुआ है का भी उल्लेख किया। परन्तु आधुनिक खोजो के आधार पर कार्ल खण्डालावाला एवं सरयू दोषी जैसे विद्वानों ने 1060 ई0 की द्रोणाचार्य कष्त 'ओधनिर्युक्तिवृत्ति' का उल्लेख किया, जो जैसलमेर जैन ज्ञान भण्डार में सुरक्षित है। यह ग्रन्थ चित्र प्रथम ताडपत्रीय जैन चित्र शैली की प्रथम कृति के रूप में सर्वमान्य रही।

ओधेनिर्युक्तिवषत्ति नामक इस ग्रन्थ चित्रों मे लक्ष्मी, कामेदव, हाथी व पूर्ण कलश का जैसा चित्रण मिलता है, उस प्रकार की चित्रण शैली पश्चिमी भारतीय कला शैली की किसी और पोथी में नही मिलती। इन चित्रों मे परली आँख और सवा चश्मी चेहरो का अंकन नही मिलता। ये चित्र पूर्ववती अजन्ता शैली व परवर्ती पश्चिमी भारतीय शैली के बीच सन्धिकालीन चित्र माने गये है।

सन् 1100ई0 में भडौच मे जयसिंह के शासनकाल में देवप्रसाद द्वारा लिखित 'निशीथचूर्णी' इस परम्परा की दूसरी पोथी मानी गयी।इनके अतिरिक्त ताडपत्रीय ग्रन्थ परम्परा में जैन धर्म के श्वेताम्बर सम्प्रदाय की अनेको पुस्तकों का उल्लेख किया जा सकता है जैसे श्वेताम्बर जैन भण्डार, कैम्बे मे संग्रहित सन् 1127ई0 की ज्ञानसूत्र, सन् 1143ई0 की दशैवकालिक लघुवृत्ति, सन् 1161ई0 की ओधनिर्युक्तिवृत्ति, सन् 1237ई0 की त्रिशष्टिशलाका पुरूष चरित्र, सन् 1241, ई0 की नेमिनाथ चरित्र, सन् 1256ई0 की कथारत्न सागर, सन् 1278ई0 की कालकाचार्यकथा, सन् 1279ई0 की कालिकाचार्य कथा, 12वीं शतीं का उत्तराध्ययन सूत्र, राजेन्द्र सिंह सग्रंह, कलकत्ता में सग्रंहित सन् 1063ई0 का ज्ञाताधर्मकथा, मुनिजिन विजय जी के संग्रह में सग्रंहित पिण्डनिर्युक्ति, सन् 1241 ई0 व सन् 1270ई0 के सावगापदिक्कमनुसुत्तचुन्नि, जैसलमेर मण्डार के सन् 1288ई0 के पार्श्वनाथ व नेमिनाथ चरित्र व प्रथम सुबाहुकथा, सिद्धहेमशब्दानुशासन वृहत्तवृति, सन् 1238ई0 की प्रवचनसारोद्वारवृत्ति सह व सन् 1273ई0 की ऋषभदेवचरित्र आदि।

पश्चिमी भारतीय चित्र शैली की अधिकांश चित्रित ताडपत्रीय पाण्डुलिपियाँ जैन धर्म के श्वेताम्बर सम्प्रदाय की प्राप्त होती है। जैन धर्म के दिगम्बर सम्प्रदाय की चित्रित पोथियों की संख्या अत्याधिक निम्न है। जिस सन्दर्भ मेंसन् 1112ई0 की षटखण्डागमं, सन् 1112ई0 सन् 1120 ई0 की महाबन्ध व 'कषांयपाहुड अर्थात धवला, जयधवला व महाधवला आदि उल्लेखीन है। षट्खण्डागम में दो, महाबन्ध में सात तथा कषायपाहुड में मात्र चौदह चित्र है।

प्राचीन ग्रन्थों की रचना, प्रतिलिपि करवाना तथा ग्रन्थों को खरीदकर आचार्यों की भेट करना धार्मिक कष्त्य माना जाता था। ताडपत्र पर रचित ये सभी ग्रन्थ जैन धर्म सम्बन्धित रहे। जिनमें तीर्थकरों के, जैन देवियो के,साधुओं साध्वियों, श्रावक, श्राविकाओं व शिष्यों के चित्र बनाये गये। इन ग्रन्थों में चित्रो को आकर्षण के कारण ही चित्रित नही किया गया वरन् इनका धार्मिक महत्व भी था। हालाकिं ये चित्र प्रारम्भ में कथानक (जो पृष्ठ पर लिखा होता था) से सम्बन्धित नही होते है, परन्तु बाद में धीरे धीरे

कथानक से सम्बन्धित चित्र बनने प्रारम्भ हो गए जिस सन्दर्भ में सर्वप्रथम 1288ई0 की सुबाहु कथा प्रमुख मानी गयी। पशुआकृतियों व वृक्षों का अंकन भी प्रथम बार इसी ग्रन्थ चित्र में देखने को मिलता है।

ताडपत्रों का धार्मिक महत्व भी था तथा ताडपत्रों को अत्यधिक टिकाऊ, लचीला, पवित्र व शुद्ध माना गया। शायद इसी कारण ही पश्चिमी भारतीय कला शैली में कागज काल के प्रारम्भ होने के बाद भी ताड़षत्रों का प्रयोग बन्द नही हुआ, अपितु अनेको ताडपत्रीय ग्रन्थों की रचना हुई। जिनमें सन् 1382ई0 की पालीताना कल्पसूत्र व सन् 1388ई0 की 'आवश्यकलघुवृत्ति' नामक ग्रन्थ प्रमुख माने जाते है।

ताडपत्र दो प्रकार के होते है।

1. श्री ताड़
2. खर ताड़

श्रीताड़ के पन्ने अधिक चिकने और लचीले होते है, जिसके कारण इस पर चित्र आसानी से बनते है और अधिक टिकाऊ भी होते है। श्री ताड़ मद्रास, लंका, बर्मा, तथा बंगाल में उत्पन्न होता है और इन्ही स्थानों से मध्यकाल में श्री ताडपत्र के पन्ने सारे भारत को निर्यात किए जाते थे। इनका औसत आकार 3″ × 37″ होता है। लम्बाई अधिक होने के कारण, अच्छे आकार प्रकार के पन्ने इनमें से काटकर निकाले जाते थे। इन ताडपत्रों की चौडाई अधिक न होने के कारण चित्रण के लिए अत्यन्त संकरा क्षेत्र मिला। फलस्वरूप ताडपत्र पर लेखन के बीच बीच छोटे–छोटे चौकोरो में चित्र बन पाए।

ताडपत्र लेखन व चित्रण का अत्यधिक प्राचीन व महत्वपूर्ण आधार होने पर भी उसमे कमी यह है कि अगर कागज इसके संपर्क में अधिक रहता है तो इसके द्वारा निकलने वाले रस के कारण वह कपडा व कागज काला पडने लगता है व धीरे धीरे इसका असर ताडपत्र पर भी पडने लगता है। ताडपत्र का रंग हल्का पीला होता है लेकिन इन्हे कीटाणुओं से बचाने के लिए उन पर हल्दी का लेप भी चढाया जाता था।

ताडपत्र की लम्बाई के अनुसार इसके अंतराल को लेखन व चित्रण के लिए दो या तीन भागों में बाट लिया जाता था तथा लगभग एक इंच का मार्जिन छोटा जाता था। इन पत्रों को उचित प्रकार से रखने के लिए मध्य में एक डोरी से बांध दिया जाता था। पहले इन पर लेखन कार्य किया जाता था जो हमेशा अग्रिम पृष्ठ के पिछली तरफ से प्रारम्भ होता था। बाहरी छोर वाले प्रारम्भिक व अन्तिम पृष्ठ सदा रिक्त रहते थे। लेखन कार्य बांयी से दायी दिशा में होता था तथा अक्षर रचना बडे आकार में की जाती थी। तत्पश्चात् इन पर चित्रण कार्य किया जाता था,य जिसमें कोणीय रेखांकन व रूढिगत आकृतियों का प्रयोग किया गया तत्पश्चात् सम्भवतः लेखनी की सहायता से ही रेखाकंन के पश्चात् रंग भरें जाते है। ताडपत्र काल में पीले व लाल रंग का अधिक्य रहा तथा हरा रंग बहुत न्यून रूप में प्रयोग किया गया। कही कही स्वर्ण का भी प्रयोग किया गया। आँखो की बनावट पश्चिमी भारतीय कला शैली की प्रमुख विशेषता रही। चित्रो की आकषति एक चश्म, डेढ चश्म व दो चश्म है। उढी हुई परवल जैसी आँख कानो तक खिंची काजल रेखा, दूसरी आँख नाक से बाहर निकली दिखायी गयी। दुडडी दोहरी व छोटी है, भौहे कही कही मिली हुई आदि ये इन चित्रों की प्रमुख विशेषता रही।

एक चित्र की आत्मा उसके रेखा सौष्ठव के रूप में प्रस्तुत होती है। इस शैली के ताडपत्रीय ग्रन्थ चित्रों की रेखाओं ने सम्पन्नता दृष्टिगत होती है। ताडपत्रीय चित्रों में जैन कलाकरों ने जो सूक्ष्म रेखाएँ अंकित की हैं वे इतनी सुंदर और सधी हुई कि कलाकार की प्रतिभा और उसके कौशल को दाद दिए बगैर नही रहा जा सकता परन्तु ताडपत्र की जगह कागजका प्रचलन हो जाने के कारण रेखाओं का जो सौष्ठव था वह जाता रहा। ताडपत्रीय ग्रन्थ चित्रो के निर्माण की श्रृंखला मे रेखाकंन व चित्रण कार्य के पश्चात् चित्रकार इन पत्रों पर सिन्दूरी रंग से पेज संख्या व डोरी के छेद के लिए स्थान बनाता था बाद में इन पत्रों को एक लकडी के चित्रित कवर से सुसज्जित कर दिया जाता। तत्पश्चात् सम्पूर्ण ग्रन्थ को एक कपडे में बाँध दिया जाता था।

इस प्रकार विभिन्न कलाकारो द्वारा राजस्थानी, मुगल, पहाडी आदि शैलियों की पथ प्रदर्शक शैली के वे ग्रन्थ चित्र तैयार किये गये जो भारतीय कला के इतिहास के मार्ग में मानस्तम्भ के रूप में खडे हुऐ है। ताडपत्रीय ग्रन्थ चित्र देश विदेश के विभिन्न कला संग्रहालयों की शोभा बढा रहे है। व भारतीय कलाकारो को निरन्तर प्रेरणा प्रदान कर रहे है।

सन्दर्भ पुस्तकें

1. *भारतीय ग्रन्थ चित्रों की सामग्री एवं पद्वति–डॉ0 शुकदेव श्रोत्रिय चित्रायन, प्रकाशन, मुजफ्फरनगर।*
2. *भारतीय चित्रकला में जैन चित्र शैली–डॉ0 झाबरमल, राज पब्लिशिंग, जयपुर*
3. *उत्तर भारतीय पोथी चित्रकला–डॉ0 शैलेन्द्र कुमार, कला प्रकाशन*
4. *भारतीय चित्रकला के विविध आयाम–डॉ0 प्रेमशंकर द्विवेदी, कला प्रकाशन, वाराणसी*
5. *भारतीय चित्रकला शोध संचय–1997, भारतीय चित्रकला विषयकशोध लेखो का संकलन–डॉ0 शुकदेव श्रोत्रिय, चित्रायन प्रकाशन, मुजफ्फरनगर*
6. *कला विलास, भारतीय कला का इतिहास–डॉ0 आर0ए0 अग्रवाल, लायल बुक डिपो*